श्री रक्षांबधन पर्व महापूजा

(रचयिता- आचार्य श्री विमर्शसागर जी महाराज)

निष्काम साधना के साधक, आराधक शुद्धातम पथ के।
जिनधर्म ध्वजा फहराने तुम, सारथि थे रत्नत्रय रथ के॥
मुनिराज सात सौ इस रथ पर, होकर सवार जब चलते थे।
दर्शन करने को श्रावक क्या? स्वर्गों के देव मचलते थे॥
अनहोनी थी कर्मोदय ने, करके उपसर्ग परीक्षा ली।
तुम संघ सहित निज में अविचल विष्णुकुमार ने रक्षा की॥
आचार्य अकम्पन नाम अहा, शिवपथिकों के मन भाता था।
जो चरण धूल पा जाता था, अपना सौभाग्य मनाता था॥
मैं भी चरणोदक पाने को, पूजा का थाल सजा लाया।
रत्नत्रय का वरदान मिले, हो स्वानुभूति मंगल छाया॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतकमुनि समूह एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतकमुनि समूह एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतकमुनि समूह एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(परिपुष्पांजलिं क्षिपामि)

मिथ्यामल को धोकर तुमने, निजशुद्ध चेतना को पाया।
निज वीतराग की परिणति से, चारित्र मोह को नहलाया॥
आचार्य अकंपन विष्णु नमूँ, मुनिराज सात सौ ध्याऊँ मैं।
नश जाये जन्म जरा मृत्यु, शुद्धातम अनुभव गाऊँ मैं॥1॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज चिदानन्द के चन्दन से, तुमने भवताप मिटाया है।
शुद्धातम बल को हे स्वामिन्! निज पौरुष से प्रगटाया है॥
आचार्य अकंपन विष्णु नमूँ, मुनिराज सात सौ ध्याऊँ मैं।
संसार ताप का नाश करुँ, चिन्मय स्वरूप निज पाऊँ मैं॥2॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय ज्ञायक पद सुखदायी, अनुभव से तुमने जान लिया।
इन्द्रादिक पद दुःखदायी हैं, शुभकर्मों का फल मान लिया॥
आचार्य अकंपन विष्णु नमूँ, मुनिराज सात सौ ध्याऊँ मैं।
अक्षयपद निज से प्रगटाऊँ, अविनाशी सुख को पाऊँ मैं॥3॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ज्ञानानंद स्वभाव सहज, अनुभव से तुमने जाना था।
कामादिक भाव विनष्ट हुये, निजधर्म ही निज का माना था॥
आचार्य अकपंन विष्णु नमूँ, मुनिराज सात सौ ध्याऊँ मैं।
यह कामबाण विध्वंस करुँ, निष्काम दशा को पाऊँ मैं॥4॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रसना के रस में रस लेकर, अब तक निज रस को न जाना।
तुमने निजरस का पान किया, रसना रस में सुख न माना॥
आचार्य अकंपन विष्णु नमूँ, मुनिराज सात सौ ध्याऊँ मैं।
इस क्षुधारोग का नाश करुँ, निज उपशम रस चख गाऊँ मैं॥5॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस मोहकर्म ने अर्द्धचक्रि-चक्री को भी मजबूर किया।
चेतन प्रकाश प्रगटा तुमने उस मोह तिमिर को दूर किया॥

आचार्य अकंपन विष्णु नमूँ, मुनिराज सात सौ ध्याऊँ मैं।
मोहान्धकार का नाश करुँ, निर्मोह आत्मा पाऊँ मैं॥6॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

साधक व्यवहार महातप से प्रगटाई निश्चय तप ज्वाला।
जब आत्मलीनता में तुमने कर्मों का संवर कर डाला॥
आचार्य अकंपन विष्णु नमूँ, मुनिराज सात सौ ध्याऊँ मैं।
आठों कर्मों को दहकाने, निश्चय संवर को पाऊँ मैं॥7॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अविकार अचल अविकल अनुपम स्वाधीन सहज सुख पाने को।
तुम परमसमाधि लीन हुये हे नाथ! मुक्तिफल पाने को॥
आचार्य अकंपन विष्णु नमूँ, मुनिराज सात सौ ध्याऊँ मैं।
सम्यक् शिवफल हो प्रगट मुझे, वह परमसमाधि पाऊँ मैं॥8॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उपसर्गों में संघर्षों में, तुमने समभाव बनाया है।
हे स्वामिन्! यह समभाव स्वयं बनकर अनर्घ्यपद आया है॥
आचार्य अकंपन विष्णु नमूँ, मुनिराज सात सौ ध्याऊँ मैं।
ऐसा अनर्घ्य पद मिल जाये, भावों से अर्घ्य चढ़ाऊँ मैं॥9॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय अनर्घ्य प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

सूरि अंकपन संघ पर, हुआ घोर उपसर्ग।
दूर किया विष्णु मुनि, किया श्रेष्ठ उत्सर्ग॥

एक था मालवदेश प्रसिद्ध, राजधानी थी उज्जैनी।
श्री वर्मा नृप करता राज्य, धर्मपालक सच्चा जैनी॥

वृहस्पति नमुचि बलि प्रहलाद, महाचातुर थे मंत्री चार।
श्री वर्मा नृप का आदेश, उन्हें था हरपल ही स्वीकार॥

किन्तु जिनधर्म और निर्ग्रन्थ, मुनि के प्रति था उनको द्वेष।
इसी कारण से मन ही मन, रहा करता था उनको क्लेश॥

तीर्थाटन करते आचार्य, अकंपन संघ सहित आये।
नगर उपवन में किया प्रवेश, नगर में उत्सव थे छाये॥

अहा धर्मीजन की टोली, नाचतीं थीं उमगाती थीं।
गुँजाती नभभेदी जयकार, साधु दर्शन को जाती थीं।

नृपति ने बुला मंत्रियों को, कही साधु दर्शन की बात।
अमंगल होगा दर्शन से, विनय से बोले मंत्री साथ॥

आग दर्शन, विष दर्शन से, हुआ है प्राणहीन कब कौन?
सुना नृपमुख से ऐसा प्रश्न, निरुत्तर हो मंत्री थे मौन॥

निष्पृही संतों का दर्शन, जगत् में होता मंगलमय।
चला नृप निज मंगल करने, प्रजा मंत्री संग हो निर्भय॥

अकंपन गुरु ने दिया आदेश, मौन हो करो निजातम ध्यान।
नृपति धर्मी है किन्तु मंत्री, धर्म से हीन, नहीं श्रद्धान॥

सात सौ मुनि थे निज में लीन, अकंपन गुरु के वचन प्रमाण।
वीतरागी मुनिचर्या से हुआ, नृप को रोमांच महान॥

सुअवसर जान मंत्री बोले, सभी मुनि मूरख अज्ञानी।
जान नृप आया दर्शन हेतु, मौन हैं सब बगुला ध्यानी॥

किया इन सब नंगों ने आज, हे राजन्! श्री पति तव अपमान।
इन्हैं देकर के मृत्युदण्ड, करो राजन्! इनका कल्याण॥

नृपति ने कहा मंत्रियों से रखो, अपनी जुबान तुम बन्द।
रंक-राजा के प्रति समभाव, धन्य हैं वीतरागी मुनिवृन्द॥

नगर को जाता था सम्राट, मिले श्रुतसागर जी मुनिराज।
हुआ मंत्री से वाद-विवाद, हार से हुए मंत्री नाराज॥

अकंपन गुरु को मुनिवर ने बताई घटना सारी बात।
जान-अनहोनी गुरु बोले योगधर वहीं बिताओ रात॥

उधर अपमानित चारों मंत्री हाथ में ले नंगी तलवार।
देख मुनि को निज शत्रु जान अन्य मुनियों का तजा विचार॥

मारने को चारों मंत्री उठाते हाथ लिये तलवार।
हुये कीलित पछताये खूब मचा नगरी में हाहाकार॥

मुनि ने किया क्षमा, नृप ने दिया निर्वास दण्ड अनुसार।
हस्तिनापुर जाकर राजा पद्म की करते जय-जयकार॥

पद्म राजा के शत्रु को बना लाये बन्दी जब साथ।
लिया मुँह माँगा वर, बलि ने कहा जब चाहूँ तब दो नाथ॥

योगवश संघ सहित आचार्य अकंपन इसी नगर आये।
नृपति संग दर्श हेतु कैसे जायेंगे? मंत्री घबराये॥

पद्म नृप से रक्षित वरदान बलि ने माँग लिया तत्काल।
राज सिंहासन का उपभोग करुँगा सात दिवस नरपाल॥

हुआ नरमेघ यज्ञ आरंभ अस्थि मज्जा पशुओं का होम।
हुये ध्यानस्थ सभी मुनिराज धुयें से थर्राया था व्योम॥

गूँजते हा-हा-हा-हा शब्द देखकर मुनियों का उपसर्ग।
बलि दे रहा किमिच्छक दान किन्तु हिंसक थे सारे अर्घ॥

विक्रिया ऋद्धि के धारी महामुनिवर थे विष्णु कुमार।
धन्य है वात्सल्य का भाव धरा याचक वामन अवतार॥

माँगकर तीन पाँव भूमि प्रथम पग रखा सुमेरु पर।
दूसरा मानुषोत्तर और तीसरा बलिनृप के ऊपर॥

क्षमा की करता बलि गुहार हुआ है मुझसे भारी पाप।
करुँगा मुनियों की रक्षा हृदय में उपजा पश्चाताप॥

सभी ने कीनी नवधाभक्ति दिया मुनिराजों को आहार।
बाँधकर सबको रक्षा सूत्र किया था सबने मंगलाचार॥

पुनः मुनिव्रत धारण करके किया तप मुनिवर विष्णुकुमार।
नष्टकर अष्टकर्म बंधन पा लिया सिद्धसदन शिवकार॥

श्रवण शुक्ला पूनम का दिन बना रक्षाबंधन त्यौहार।
रखो सब वात्सल्य का भाव करो मुनिराजों की जयकार॥

जयति जय जय अंकपनाचार्य सात सौ मुनि की जय जयकार।
जयति जय वात्सल्य का भाव जयति जय मुनिवर विष्णुकुमार॥

वात्सल्य का शुभ दिवस, रक्षाबन्धन पर्व।
मुनिरक्षा संकल्प से, हो अन्तर में गर्व॥

ॐ ह्रीं श्री अकम्पनाचार्यादि सप्तशतक मुनिभ्यो एवं विष्णुकुमार मुनीन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।